“क्रान्तिकारी राष्ट्रवाद और स्वतंत्र भारत की संकल्पना: सुभाष चन्द्र बोस के वैचारिक दृष्टिकोण का विश्लेषण”

E-CONTENT

(FOR THE STUDENTS OF BA SEMESTER 6TH, MA SEMESTER 3RD AND 4TH)

- प्रो. अरुण कुमार सिंह
इतिहास विभाग
डी.ए.वी. पी.जी. कॉलेज, आजमगढ़, उत्तर प्रदेश -276001
ई-मेल आईडी: arunnsingh99@gmail.com
मोबाइल नंबर: 8318225375

भारतीय स्वतंत्रता आंदोलन केवल औपनिवेशिक शासन से मुक्ति प्राप्त करने का राजनीतिक अभियान नहीं था, अपितु इसके भीतर राष्ट्र, राज्य, समाज, अर्थव्यवस्था और स्वतंत्रता के स्वरूप को लेकर अनेक वैचारिक प्रवृत्तियाँ विकसित हुईं। इन प्रवृत्तियों में सुभाष चन्द्र बोस का चिंतन एक विशिष्ट और संघर्षशील राष्ट्रवादी धारा के रूप में सामने आता है। उनका राष्ट्रवाद औपनिवेशिक सत्ता के प्रतिरोध तक सीमित न रहकर स्वतंत्र भारत की राजनीतिक, सामाजिक और आर्थिक संरचना के संबंध में एक व्यापक दृष्टि प्रस्तुत करता है। बोस के लिए स्वाधीनता का आशय केवल विदेशी शासन के अंत से नहीं था, ऐसी राष्ट्रीय व्यवस्था की स्थापना से था जिसमें भारत अपने राजनीतिक निर्णय स्वयं लेने में सक्षम हो, अपनी आर्थिक क्षमताओं का विकास कर सके तथा सामाजिक विविधताओं को एक व्यापक राष्ट्रीय चेतना के अंतर्गत संगठित किया जा सके।

प्रस्तुत अध्ययन का उद्देश्य सुभाष चन्द्र बोस के क्रान्तिकारी राष्ट्रवाद की वैचारिक पृष्ठभूमि, उसकी प्रमुख विशेषताओं तथा स्वतंत्र भारत की उनकी संकल्पना का विश्लेषण करना है।बोस का राजनीतिक चिंतन उस ऐतिहासिक परिस्थिति में विकसित हुआ जब भारत औपनिवेशिक शासन के कारण राजनीतिक पराधीनता, आर्थिक शोषण और सामाजिक विषमताओं का सामना कर रहा था। उन्होंने राष्ट्रीय आंदोलन की दिशा को केवल संवैधानिक सुधारों और सीमित राजनीतिक अधिकारों की प्राप्ति तक सीमित रखने के बजाय पूर्ण स्वतंत्रता को राष्ट्रीय संघर्ष का केंद्रीय लक्ष्य बनाने पर बल दिया। उनके विचारों में राजनीतिक स्वतंत्रता के लिए दृढ़ इच्छाशक्ति, संगठित राष्ट्रीय शक्ति, अनुशासन, त्याग और सक्रिय संघर्ष को विशेष स्थान प्राप्त था। वे इस बात पर बल देते थे कि किसी भी राष्ट्र की मुक्ति केवल राजनीतिक नेतृत्व के प्रयासों से संभव नहीं होती, उसके लिए व्यापक

जनसहभागिता, संगठनात्मक क्षमता और राष्ट्रीय उद्देश्य के प्रति समर्पण आवश्यक है। इसी दृष्टिकोण के कारण उनका राष्ट्रवाद निष्क्रिय प्रतीक्षा के स्थान पर सक्रिय राजनीतिक हस्तक्षेप और संघर्ष की भावना को महत्व देता है।सुभाष चन्द्र बोस के राष्ट्रवाद का एक महत्वपूर्ण पक्ष राष्ट्रीय एकता की उनकी अवधारणा थी। वे भारत की भाषायी, धार्मिक, सांस्कृतिक और सामाजिक विविधताओं के बावजूद एक व्यापक भारतीय राष्ट्रीय पहचान के निर्माण के समर्थक थे। उनके लिए राष्ट्र की शक्ति विभिन्न समुदायों के बीच विभाजन में नहीं, बल्कि साझा राष्ट्रीय उद्देश्य के लिए उनके संगठन में निहित थी। उन्होंने संकीर्ण प्रांतीयता, साम्प्रदायिक विभाजन और सामाजिक विखंडन से ऊपर उठकर राष्ट्रीय एकता को स्वतंत्रता संघर्ष की आवश्यक शर्त के रूप में देखा।

आजाद हिन्द आंदोलन और उससे संबद्ध संगठनात्मक प्रयासों में विभिन्न सामाजिक एवं क्षेत्रीय समूहों को एक राष्ट्रीय उद्देश्य के अंतर्गत संगठित करने की उनकी आकांक्षा स्पष्ट रूप से दिखाई देती है। उनका राष्ट्रवाद भावनात्मक देशभक्ति के साथ-साथ संगठनात्मक और राजनीतिक एकता पर भी आधारित था।स्वतंत्र भारत की उनकी परिकल्पना का दूसरा महत्वपूर्ण आयाम आर्थिक आत्मनिर्भरता और योजनाबद्ध विकास से संबंधित था। बोस यह समझते थे कि राजनीतिक स्वतंत्रता तब तक पूर्ण अर्थों में सार्थक नहीं हो सकती, जब तक देश आर्थिक रूप से सक्षम और आत्मनिर्भर न बने। वे औद्योगिक विकास, वैज्ञानिक अनुसंधान, तकनीकी प्रगति तथा राष्ट्रीय संसाधनों के योजनाबद्ध उपयोग को आधुनिक भारत की शक्ति के लिए आवश्यक मानते थे। उनके विचारों में आर्थिक पुनर्गठन केवल उत्पादन बढ़ाने का साधन नहीं था, राष्ट्रीय क्षमता को सुदृढ़ करने और व्यापक सामाजिक हितों को आगे बढ़ाने का माध्यम भी था।

समकालीन संदर्भ में बोस के विचार इसलिए महत्वपूर्ण है कि इससे स्वतंत्रता, राष्ट्रवाद और राष्ट्र-निर्माण के संबंधों को ऐतिहासिक अनुभवों तथा वैकल्पिक राजनीतिक दृष्टियों के आधार पर समझने की संभावना विकसित होती है। सुभाष चन्द्र बोस का क्रान्तिकारी राष्ट्रवाद भारतीय स्वतंत्रता संघर्ष की एक प्रभावशाली वैचारिक धारा होने के साथ-साथ स्वतंत्र भारत की संभावित दिशा पर विचार करने वाला एक महत्वपूर्ण राजनीतिक चिंतन भी प्रस्तुत करता है।

भारतीय स्वतन्त्रता आन्दोलन आधुनिक भारतीय इतिहास की सबसे व्यापक और बहुआयामी ऐतिहासिक प्रक्रियाओं में से एक था। इसका उद्देश्य केवल ब्रिटिश औपनिवेशिक शासन से राजनीतिक मुक्ति प्राप्त करना नहीं था, इसके भीतर भारत के भावी स्वरूप को लेकर अनेक प्रकार के विचार विकसित हुए। राष्ट्र किस प्रकार संगठित हो, राज्य की भूमिका क्या हो, आर्थिक विकास की दिशा कैसी हो, सामाजिक विषमताओं का समाधान किस प्रकार किया जाए तथा स्वतंत्रता को किस रूप में समझा जाए।इन सभी प्रश्नों पर राष्ट्रीय आन्दोलन के विभिन्न नेताओं और विचारधाराओं ने अपने-अपने दृष्टिकोण प्रस्तुत किए। इसी वैचारिक विविधता के भीतर सुभाष चन्द्र बोस का राष्ट्रवाद एक विशिष्ट और संघर्षशील धारा के रूप में विकसित हुआ।सुभाष चन्द्र बोस का राजनीतिक व्यक्तित्व बीसवीं शताब्दी के उस दौर में निर्मित हुआ जब भारतीय समाज में औपनिवेशिक शासन के विरुद्ध

असंतोष तीव्र हो रहा था। बंगाल के राजनीतिक वातावरण, स्वामी विवेकानन्द तथा अरविन्द घोष जैसे विचारकों के प्रभाव और राष्ट्रीय मुक्ति के आदर्श ने उनके वैचारिक विकास को प्रभावित किया। अपनी आत्मकथात्मक कृति में बोस ने अपने आरम्भिक मानसिक एवं वैचारिक विकास का उल्लेख किया है। उनके जीवन में आध्यात्मिक अनुशासन, सेवा, त्याग और राष्ट्रीय कर्तव्य की भावना का गहरा संबंध दिखाई देता है।

सन् 1965 में प्रकाशित उनके आत्मकथात्मक ग्रंथ में बाल्यावस्था से लेकर राजनीतिक चेतना के विकास तक की सामग्री उपलब्ध है।बोस के राजनीतिक चिंतन का केंद्रीय तत्व राष्ट्रीय स्वतंत्रता था। उनके लिए स्वतंत्रता किसी सीमित राजनीतिक सुधार अथवा औपनिवेशिक शासन में भारतीय भागीदारी का प्रश्न नहीं थी। वे भारत की पूर्ण राजनीतिक प्रभुता के समर्थक थे। भारतीय राष्ट्रीय आन्दोलन के क्रमिक विकास का अध्ययन करते हुए बोस ने अनुभव किया कि ब्रिटिश शासन के विरुद्ध संघर्ष को अधिक संगठित और निर्णायक रूप देने की आवश्यकता है। उनकी दृष्टि में राजनीतिक अधिकारों की क्रमिक प्राप्ति की अपेक्षा पूर्ण राष्ट्रीय स्वतंत्रता को स्पष्ट लक्ष्य बनाना अधिक आवश्यक था। उनकी प्रसिद्ध कृति 'भारतीय संघर्ष' में 1920 से 1942 तक के राष्ट्रीय आन्दोलन की घटनाओं तथा राजनीतिक प्रवृत्तियों का विश्लेषण मिलता है।

बोस का राष्ट्रवाद निष्क्रिय राष्ट्रवाद नहीं था। वे मानते थे कि राष्ट्रीय मुक्ति के लिए केवल राजनीतिक घोषणाएँ पर्याप्त नहीं हैं। उसके लिए संगठन, अनुशासन, त्याग, साहस और सक्रिय संघर्ष आवश्यक हैं। इस कारण उनके राष्ट्रवाद में युवा वर्ग की भूमिका अत्यंत महत्वपूर्ण थी। वे युवाओं को राष्ट्र की गतिशील शक्ति मानते थे और उन्हें राष्ट्रीय पुनर्निर्माण के लिए तैयार करना चाहते थे। उनके विचारों में राष्ट्र केवल भौगोलिक इकाई नहीं था, एक ऐसी संगठित सामूहिक शक्ति था जो अपने राजनीतिक भाग्य का निर्धारण स्वयं कर सके।उनके राष्ट्रवाद की दूसरी महत्वपूर्ण विशेषता राष्ट्रीय एकता थी। भारत अनेक भाषाओं, धर्मों, जातियों, क्षेत्रों और सांस्कृतिक परंपराओं वाला देश था। बोस इस विविधता को समाप्त करने के पक्षधर नहीं थे, एक साझा राष्ट्रीय चेतना के माध्यम से उसे एक राजनीतिक शक्ति में परिवर्तित करना चाहते थे। हरिपुरा कांग्रेस अधिवेशन के अध्यक्षीय भाषण में उन्होंने मजबूत केंद्रीय शासन के साथ प्रान्तों और अल्पसंख्यक समुदायों के हितों को सुरक्षित रखने की आवश्यकता पर बल दिया था। उन्होंने शिक्षा, संचार तथा साझा राष्ट्रीय चेतना को देश के विभिन्न भागों को जोड़ने का माध्यम माना।बोस के राष्ट्रवाद को केवल भावनात्मक देशभक्ति मानना इसलिए उचित नहीं होगा क्योंकि उसमें आर्थिक पुनर्निर्माण का प्रश्न भी प्रमुख था। उनका मानना था कि राजनीतिक स्वतंत्रता तभी सार्थक होगी जब भारत आर्थिक रूप से सक्षम बने। औपनिवेशिक शासन के कारण भारतीय अर्थव्यवस्था में जो निर्भरता विकसित हुई थी, उसे समाप्त करना राष्ट्रीय पुनर्निर्माण का आवश्यक अंग था।

औद्योगिकीकरण, वैज्ञानिक अनुसंधान, तकनीकी प्रगति और योजनाबद्ध आर्थिक विकास के प्रति बोस की रुचि इसी संदर्भ में समझी जानी चाहिए।हरिपुरा अधिवेशन में बोस के विचारों में आर्थिक

नियोजन और औद्योगिक विकास की आवश्यकता स्पष्ट रूप से सामने आई। वे आधुनिक उद्योग को राष्ट्रीय शक्ति का आधार मानते थे। उनके विचारों में राज्य को केवल कानून-व्यवस्था बनाए रखने वाली संस्था के रूप में नहीं, आर्थिक पुनर्निर्माण की सक्रिय शक्ति के रूप में देखा गया। राष्ट्रीय संसाधनों का नियोजन, उत्पादन में वृद्धि, औद्योगिक विकास और वैज्ञानिक अनुसंधान को उन्होंने स्वतंत्र भारत के निर्माण से जोड़ा।

इस दृष्टिकोण के कारण बोस का चिंतन तत्कालीन भारतीय राष्ट्रीय आन्दोलन के भीतर एक विशिष्ट स्थान ग्रहण करता है। सुमित सरकार ने 1937 से 1945 के काल को भारतीय राजनीति में अत्यंत महत्वपूर्ण परिवर्तन का दौर माना है, जिसमें औपनिवेशिक सत्ता, राष्ट्रीय आन्दोलन, समाजवादी विचारधारा और द्वितीय विश्वयुद्ध की परिस्थितियाँ परस्पर जुड़ी हुई थीं। उनके आधुनिक भारत संबंधी ग्रंथ में 1937 से 1945 के राजनीतिक घटनाक्रम को पृथक अध्याय में स्थान दिया गया है।बोस की राजनीति को समझने के लिए उनके कांग्रेस के साथ संबंधों का अध्ययन भी आवश्यक है। वे कांग्रेस के भीतर रहते हुए उसके नेतृत्व, कार्यनीति और संगठनात्मक दिशा से जुड़े रहे, लेकिन समय के साथ उनके विचारों और कांग्रेस के प्रभावशाली नेतृत्व के बीच मतभेद बढ़ते गए।

1938 में वे कांग्रेस के अध्यक्ष बने और 1939 में पुनः अध्यक्ष चुने गए, लेकिन संगठनात्मक तथा वैचारिक मतभेदों के कारण उन्हें अध्यक्ष पद से हटना पड़ा। इसके बाद उन्होंने अग्रगामी दल के माध्यम से अपनी राजनीतिक दिशा को आगे बढ़ाया। सन् 1939 से 1941 तक के उनके भाषणों, लेखों, वक्तव्यों और पत्रों का संकलन उनके राजनीतिक चिंतन को समझने में महत्वपूर्ण स्रोत है। इसके 2004 के संस्करण में 'आगे की दिशा', रामगढ़ भाषण तथा देश के सामने उपस्थित समस्याओं जैसे विषयों से संबंधित सामग्री उपलब्ध है।

बोस के राजनीतिक विचारों में राज्य की शक्ति और राष्ट्रीय अनुशासन का विशेष महत्व था। वे मानते थे कि स्वतंत्रता प्राप्ति के बाद भारत को आर्थिक और सामाजिक रूप से पुनर्गठित करने के लिए एक मजबूत राजनीतिक व्यवस्था आवश्यक होगी। इस दृष्टिकोण में उनका राष्ट्रवाद उदारवादी राजनीतिक परंपरा से अलग दिखाई देता है। वे राष्ट्रीय संकट की परिस्थितियों में दृढ़ नेतृत्व और संगठित राज्य-शक्ति की आवश्यकता पर बल देते थे। यही कारण है कि उनके राजनीतिक विचारों का मूल्यांकन करते समय राष्ट्रवाद, समाजवाद, राज्य-शक्ति और लोकतांत्रिक स्वतंत्रता के बीच उनके संबंधों का आलोचनात्मक अध्ययन आवश्यक है।

लियोनार्ड ए. गॉर्डन ने सुभाष चन्द्र बोस और उनके बड़े भाई शरतचन्द्र बोस के जीवन का अध्ययन करते हुए बोस के राजनीतिक विकास को भारतीय राष्ट्रीय आन्दोलन तथा अंतरराष्ट्रीय परिस्थितियों के व्यापक संदर्भ में प्रस्तुत किया है।बोस के चिंतन का एक और महत्वपूर्ण पक्ष आजाद हिन्द फौज और आजाद हिन्द आन्दोलन है। द्वितीय विश्वयुद्ध की परिस्थितियों का उपयोग करते हुए उन्होंने भारत की स्वतंत्रता के लिए अंतरराष्ट्रीय स्तर पर समर्थन प्राप्त करने का प्रयास किया। उन्होंने

विदेशों में रह रहे भारतीयों को संगठित किया और सैन्य शक्ति के माध्यम से औपनिवेशिक शासन को चुनौती देने की रणनीति अपनाई। आजाद हिन्द फौज का इतिहास केवल सैन्य संघर्ष का इतिहास नहीं है, यह भारतीय राष्ट्रवाद के अंतरराष्ट्रीय विस्तार और राष्ट्रीय मुक्ति की वैकल्पिक रणनीति का भी इतिहास है। सुभाष चन्द्र बोस का राष्ट्रवाद केवल ब्रिटिश विरोध तक सीमित नहीं था। वह राजनीतिक स्वतंत्रता को आर्थिक आत्मनिर्भरता, सामाजिक पुनर्गठन, वैज्ञानिक विकास और राष्ट्रीय एकता से जोड़ता था। इसलिए उनके विचारों का अध्ययन स्वतंत्रता आन्दोलन के इतिहास के साथ-साथ स्वतंत्र भारत की वैकल्पिक संकल्पनाओं को समझने के लिए भी आवश्यक है।

सुभाष चन्द्र बोस के क्रान्तिकारी राष्ट्रवाद की वैचारिक पृष्ठभूमि

सुभाष चन्द्र बोस के राष्ट्रवाद की जड़ें भारतीय आध्यात्मिक परंपरा, राष्ट्रीय पुनर्जागरण और औपनिवेशिक शासन के प्रतिरोध की ऐतिहासिक परिस्थितियों में थीं। उनके व्यक्तित्व पर स्वामी विवेकानन्द तथा रामकृष्ण परम्परा के विचारों का प्रभाव पड़ा। उनके लिए राष्ट्रसेवा केवल राजनीतिक कार्य नहीं थी, एक प्रकार का नैतिक कर्तव्य थी। त्याग, अनुशासन और सेवा की भावना उनके राजनीतिक जीवन में प्रारंभ से दिखाई देती है।बोस ने यूरोप के राजनीतिक वातावरण को भी निकट से देखा। प्रथम विश्वयुद्ध के बाद विश्व राजनीति में राष्ट्रीयता, समाजवाद, साम्राज्यवाद और राज्य-शक्ति के प्रश्न अत्यंत महत्वपूर्ण हो गए थे। बोस इन सभी प्रवृत्तियों का अध्ययन कर रहे थे। उन्होंने किसी एक विदेशी विचारधारा को पूर्णतः स्वीकार नहीं किया, फिर भी उनके चिंतन में समाजवादी आर्थिक नियोजन, मजबूत राज्य और संगठित राष्ट्रीय शक्ति जैसे तत्व दिखाई देते हैं।उनका राष्ट्रवाद मूलतः भारतीय परिस्थितियों से निर्मित था। वे भारतीय स्वतंत्रता को विदेशी सत्ता के विरुद्ध व्यापक जनशक्ति के निर्माण से जोड़ते थे। इसी कारण वे युवाओं, किसानों, श्रमिकों और विभिन्न सामाजिक समूहों को राष्ट्रीय आन्दोलन से जोड़ने के पक्षधर थे। उनका विश्वास था कि राष्ट्रीय शक्ति तभी विकसित होगी जब समाज के विभिन्न वर्गों में साझा राष्ट्रीय उद्देश्य की भावना विकसित हो।

राष्ट्रीय एकता और सक्रिय संघर्ष

बोस के राष्ट्रवाद में राष्ट्रीय एकता का अत्यंत महत्वपूर्ण स्थान था। भारत की विविधता को वे उसकी कमजोरी के रूप में स्थायी रूप से स्वीकार नहीं करते थे। उनका प्रयास था कि विभिन्न समुदायों के बीच राष्ट्रीय पहचान को मजबूत किया जाए। हरिपुरा भाषण में उन्होंने देश को एकीकृत करने के लिए मजबूत केंद्रीय शासन, प्रान्तीय स्वायत्तता, सांस्कृतिक आश्वासन तथा साझा शिक्षा की आवश्यकता पर बल दिया।

उनकी दृष्टि में राष्ट्रीय एकता का आधार किसी एक धर्म, भाषा या क्षेत्र को श्रेष्ठ मानना नहीं, स्वतंत्रता के साझा उद्देश्य को बनाना था। यही कारण है कि आजाद हिन्द फौज में विभिन्न धार्मिक और क्षेत्रीय पृष्ठभूमि के भारतीयों को एक साथ संगठित किया गया। इस संगठनात्मक प्रयोग में राष्ट्रीय एकता की उनकी व्यावहारिक अवधारणा दिखाई देती है।उनका सक्रिय संघर्षवाद इसी राष्ट्रीय एकता

से जुड़ा था। बोस के लिए संगठन का उद्देश्य केवल राजनीतिक प्रचार नहीं था। संगठन को संघर्ष करने में सक्षम होना चाहिए। अनुशासन, त्याग और नेतृत्व के प्रति समर्पण को वे राष्ट्रीय मुक्ति के लिए आवश्यक मानते थे। इस प्रकार उनका राष्ट्रवाद निष्क्रिय देशभक्ति के स्थान पर कर्मप्रधान राष्ट्रवाद का समर्थन करता था।

बोस की स्वतंत्र भारत संबंधी संकल्पना में राजनीतिक प्रभुता सर्वोच्च आधार थी। वे भारत को ऐसा राष्ट्र बनाना चाहते थे जो अपने निर्णय स्वयं ले और किसी विदेशी शक्ति पर राजनीतिक रूप से निर्भर न रहे। उनके लिए स्वराज का अर्थ वास्तविक राष्ट्रीय सत्ता था।वे एक मजबूत केंद्रीय सत्ता की आवश्यकता पर बल देते थे, विशेषकर राष्ट्र-निर्माण के संक्रमणकालीन चरण में। उनका विचार था कि व्यापक सामाजिक और आर्थिक परिवर्तन के लिए राज्य को पर्याप्त शक्ति और संगठनात्मक क्षमता प्राप्त होनी चाहिए। साथ ही वे भारत की विविधता को ध्यान में रखते हुए प्रान्तों तथा अल्पसंख्यकों के अधिकारों को सुरक्षित रखने की आवश्यकता स्वीकार करते थे।

इस प्रकार उनके राजनीतिक चिंतन में राष्ट्रीय एकता और विविधता के बीच संतुलन स्थापित करने का प्रयास दिखाई देता है। उनका उद्देश्य ऐसा राज्य बनाना था जो राष्ट्रीय विकास का मार्ग प्रशस्त कर सके।

आर्थिक आत्मनिर्भरता और नियोजित विकास

बोस की स्वतंत्र भारत संबंधी संकल्पना का सबसे महत्वपूर्ण पक्ष आर्थिक आत्मनिर्भरता था। उनका मानना था कि राजनीतिक स्वतंत्रता बिना आर्थिक स्वतंत्रता के अधूरी रहेगी। औपनिवेशिक शासन ने भारतीय अर्थव्यवस्था को विदेशी हितों के अनुरूप ढाल दिया था। इसलिए स्वतंत्र भारत को अपनी उत्पादन-क्षमता, उद्योग और विज्ञान का विकास करना आवश्यक था।वे औद्योगिक विकास के समर्थक थे। उनके अनुसार भारत की विशाल जनसंख्या को रोजगार, उत्पादन और आर्थिक अवसर उपलब्ध कराने के लिए आधुनिक उद्योग आवश्यक थे। साथ ही कृषि के विकास और ग्रामीण अर्थव्यवस्था के पुनर्गठन को भी राष्ट्रीय विकास से जोड़ना आवश्यक था।

बोस योजनाबद्ध आर्थिक विकास के पक्षधर थे। वे मानते थे कि राष्ट्रीय संसाधनों का वैज्ञानिक उपयोग बिना योजनाबद्ध व्यवस्था के संभव नहीं है। राज्य को आर्थिक पुनर्निर्माण में सक्रिय भूमिका निभानी चाहिए। इस दृष्टिकोण का संबंध उस समय विकसित हो रही राष्ट्रीय नियोजन की अवधारणा से था।बोस की आर्थिक दृष्टि में केवल उत्पादन बढ़ाना लक्ष्य नहीं था। उनका उद्देश्य ऐसी अर्थव्यवस्था बनाना था जो राष्ट्रीय शक्ति को बढ़ाए और व्यापक सामाजिक हितों की पूर्ति करे। इस कारण उनके आर्थिक विचारों में औद्योगिकीकरण, वैज्ञानिक विकास, श्रम, उत्पादन और सामाजिक कल्याण एक-दूसरे से जुड़े हुए दिखाई देते हैं।

सामाजिक पुनर्गठन और वैज्ञानिक चेतना

सुभाष चन्द्र बोस के लिए राष्ट्र-निर्माण केवल राजनीतिक और आर्थिक प्रक्रिया नहीं था। सामाजिक पुनर्गठन भी उसके लिए आवश्यक था। वे जातिगत, साम्प्रदायिक और सामाजिक विभाजनों को राष्ट्रीय शक्ति के लिए बाधक मानते थे।आधुनिक शिक्षा और वैज्ञानिक दृष्टिकोण उनके सामाजिक विचारों के महत्वपूर्ण आधार थे। वे चाहते थे कि भारतीय समाज अंधविश्वास और सामाजिक जड़ता से मुक्त होकर आधुनिक ज्ञान और वैज्ञानिक चेतना को अपनाए। शिक्षा का उद्देश्य केवल रोजगार प्राप्त करना नहीं, बल्कि राष्ट्रीय चरित्र और सामाजिक उत्तरदायित्व का निर्माण भी होना चाहिए।बोस की दृष्टि में महिला शक्ति की भूमिका भी महत्वपूर्ण थी।

आजाद हिन्द फौज की रानी झाँसी रेजिमेंट इसका उल्लेखनीय उदाहरण है। महिलाओं को सैन्य संगठन में स्थान देना उस समय के सामाजिक संदर्भ में अत्यंत महत्वपूर्ण घटना थी। इससे स्पष्ट होता है कि बोस राष्ट्रीय मुक्ति में महिलाओं की सक्रिय भागीदारी के समर्थक थे।आजाद हिन्द फौज बोस की क्रान्तिकारी राष्ट्रवादी रणनीति का व्यावहारिक रूप थी। इसका उद्देश्य भारतीयों को सैन्य संगठन के माध्यम से स्वतंत्रता के संघर्ष में सक्रिय करना था। बोस ने दक्षिण-पूर्व एशिया में रहने वाले भारतीयों को संगठित किया और आजाद हिन्द सरकार की स्थापना की।आजाद हिन्द आन्दोलन के इतिहास का अध्ययन करते हुए यह ध्यान रखना आवश्यक है कि इसकी सफलता केवल सैन्य परिणामों से नहीं आँकी जा सकती। इस आन्दोलन ने भारतीयों के भीतर राष्ट्रीय आत्मविश्वास और स्वतंत्रता की भावना को व्यापक रूप से प्रभावित किया।

आजाद हिन्द फौज के सैनिकों के विरुद्ध चले लाल किले के मुकदमों ने भारतीय जनमानस में तीव्र प्रतिक्रिया उत्पन्न की।आजाद हिन्द फौज और उसके राजनीतिक प्रभाव का अध्ययन करने वाले स्रोतों में यह तथ्य सामने आता है कि उसके प्रभाव को भारतीय स्वतंत्रता आन्दोलन के अंतिम चरण की राजनीतिक परिस्थितियों से अलग करके नहीं देखा जा सकता। भारतीय राष्ट्रीय सेना के इतिहास पर उपलब्ध अध्ययनों में उसके गठन, दक्षिण-पूर्व एशिया में गतिविधियों तथा लाल किले के मुकदमों को अलग-अलग चरणों में देखा गया है।

बोस के राष्ट्रवाद का आलोचनात्मक मूल्यांकन

सुभाष चन्द्र बोस के राष्ट्रवाद का मूल्यांकन करते समय उसके सकारात्मक और विवादास्पद दोनों पक्षों को ध्यान में रखना आवश्यक है। उनका राष्ट्रवाद अत्यंत सक्रिय, संगठनात्मक और अनुशासन-प्रधान था। उन्होंने राजनीतिक स्वतंत्रता को सर्वोच्च राष्ट्रीय लक्ष्य बनाया तथा आर्थिक आत्मनिर्भरता और आधुनिक औद्योगिक विकास को राष्ट्र-निर्माण से जोड़ा।दूसरी ओर, मजबूत राज्य और अनुशासित राजनीतिक संगठन पर उनका अत्यधिक बल लोकतांत्रिक स्वतंत्रता के प्रश्न को जटिल बनाता है। वे संक्रमणकालीन अवधि में शक्तिशाली केंद्रीय सत्ता की आवश्यकता पर बल देते थे। इसलिए उनके राजनीतिक विचारों में लोकतंत्र, समाजवाद, राष्ट्रवाद और राज्य-शक्ति के बीच संबंधों को आलोचनात्मक रूप से समझना आवश्यक है।फिर भी यह तथ्य महत्वपूर्ण है कि बोस को

किसी एक विदेशी राजनीतिक विचारधारा का मात्र अनुयायी मानना उचित नहीं है। उनका चिंतन भारतीय ऐतिहासिक परिस्थितियों, औपनिवेशिक अनुभव और राष्ट्रीय मुक्ति की आवश्यकता से निर्मित हुआ था। इसी कारण उनका राष्ट्रवाद भारतीय राष्ट्रवादी विचारधारा की स्वतंत्र धारा के रूप में अध्ययन योग्य है।

समकालीन प्रासंगिकता

आज स्वतंत्रता प्राप्ति के दशकों बाद भी बोस के विचारों का अध्ययन इसलिए महत्वपूर्ण है क्योंकि वे स्वतंत्रता को केवल राजनीतिक सत्ता के हस्तांतरण तक सीमित नहीं रखते थे। उनके लिए स्वतंत्रता राष्ट्र की राजनीतिक प्रभुता, आर्थिक क्षमता, सामाजिक एकता और वैज्ञानिक प्रगति से जुड़ी थी।आज आत्मनिर्भरता, औद्योगिक विकास, वैज्ञानिक अनुसंधान, राष्ट्रीय एकता और सामाजिक समन्वय जैसे प्रश्न सार्वजनिक विमर्श के महत्वपूर्ण विषय हैं। इस संदर्भ में बोस का विचार ऐतिहासिक दृष्टि से उपयोगी आधार प्रदान करता है। हालांकि वर्तमान परिस्थितियों में उनके विचारों को उसी रूप में लागू करने के बजाय उनके ऐतिहासिक संदर्भ को समझना अधिक उचित है।बोस का सबसे महत्वपूर्ण संदेश यह था कि स्वतंत्रता केवल अधिकार नहीं, उत्तरदायित्व भी है। राष्ट्र की स्वतंत्रता को स्थायी बनाने के लिए नागरिकों में अनुशासन, कर्तव्यबोध, सामाजिक समन्वय और राष्ट्र-निर्माण की भावना आवश्यक है।

निष्कर्ष

सुभाष चन्द्र बोस का क्रान्तिकारी राष्ट्रवाद भारतीय स्वतंत्रता आन्दोलन की एक विशिष्ट वैचारिक धारा का प्रतिनिधित्व करता है। उनके चिंतन का आधार राजनीतिक स्वतंत्रता था, किंतु उनकी स्वतंत्रता की अवधारणा केवल औपनिवेशिक शासन की समाप्ति तक सीमित नहीं थी। वे स्वतंत्र भारत को राजनीतिक रूप से संप्रभु, आर्थिक रूप से आत्मनिर्भर, सामाजिक रूप से संगठित और वैज्ञानिक दृष्टि से आधुनिक राष्ट्र के रूप में देखना चाहते थे।उनके राष्ट्रवाद में राष्ट्रीय एकता का विशेष महत्व था। भारत की भाषायी, धार्मिक, सामाजिक और सांस्कृतिक विविधताओं के बीच साझा राष्ट्रीय चेतना का निर्माण उनके लिए स्वतंत्रता संघर्ष की अनिवार्य शर्त था। उनका सक्रिय संघर्षवाद इसी राष्ट्रीय एकता और संगठनात्मक शक्ति से जुड़ा था।

आर्थिक क्षेत्र में बोस औद्योगिकीकरण, वैज्ञानिक विकास और योजनाबद्ध आर्थिक पुनर्निर्माण के समर्थक थे। वे समझते थे कि आर्थिक निर्भरता राजनीतिक स्वतंत्रता को कमजोर कर सकती है। इसलिए राज्य की सक्रिय भूमिका और राष्ट्रीय संसाधनों के योजनाबद्ध उपयोग को उन्होंने महत्वपूर्ण माना।सामाजिक क्षेत्र में उनका जोर आधुनिक शिक्षा, वैज्ञानिक चेतना, सामाजिक समता और राष्ट्रीय अनुशासन पर था। आजाद हिन्द फौज तथा रानी झाँसी रेजिमेंट जैसे प्रयोगों ने उनके राष्ट्रवाद को व्यावहारिक रूप प्रदान किया। उनके लिए राष्ट्र केवल राजनीतिक संस्था नहीं, संगठित सामाजिक शक्ति था। सुभाष चन्द्र बोस की स्वतंत्र भारत संबंधी संकल्पना बहुआयामी थी। उसमें राजनीतिक

प्रभुता, आर्थिक आत्मनिर्भरता, औद्योगिक विकास, वैज्ञानिक चेतना, सामाजिक समन्वय और राष्ट्रीय अनुशासन एक-दूसरे से जुड़े हुए थे। उनका राष्ट्रवाद भारतीय स्वतंत्रता संघर्ष में एक वैकल्पिक राजनीतिक दृष्टि प्रस्तुत करता है। उसका ऐतिहासिक महत्व इसी तथ्य में निहित है कि बोस ने स्वतंत्रता को अंतिम लक्ष्य न मानकर राष्ट्र-निर्माण की व्यापक प्रक्रिया का प्रारंभिक आधार माना।

संदर्भ ग्रंथ

1. सुभाष चन्द्र बोस, भारतीय संघर्ष 1920-1942, एशिया प्रकाशन गृह, बम्बई, 1964,पृ. 37।
2. सुभाष चन्द्र बोस, एक भारतीय तीर्थयात्री : अपूर्ण आत्मकथा तथा संकलित पत्र, 1897-1921, एशिया प्रकाशन गृह, बम्बई-कलकत्ता, 1965, पृ. 19।
3. सुभाष चन्द्र बोस, वैकल्पिक नेतृत्व : भाषण, लेख, वक्तव्य और पत्र, जून 1939-1941, ओरिएंट ब्लैकस्वान, 2004, पृ. 15,।
4. सुभाष चन्द्र बोस, नेताजी के संकलित कार्य, खण्ड २, नेताजी शोध ब्यूरो, कलकत्ता, 1980, पृ. 39।
5. लियोनार्ड ए. गॉर्डन, राज के विरुद्ध दो भाई : शरत और सुभाष चन्द्र बोस की जीवनी, कोलम्बिया विश्वविद्यालय प्रकाशन, 1990, पृ. 550।
6. सुमित सरकार, आधुनिक भारत : 1947, कैम्ब्रिज विश्वविद्यालय प्रकाशन, 1989, पृ. 349।
7. रमेश चन्द्र मजूमदार, भारत में स्वतंत्रता आन्दोलन का इतिहास, खण्ड 3, फर्मा के. एल. मुखोपाध्याय, कलकत्ता,1977, पृ. 610।
8. एस. एन. सेन, भारत में स्वतंत्रता आन्दोलन का इतिहास : 1957, प्रकाशक विवरणानुसार, पृ.294।
9. टी. आर. सरीन, जापान और भारतीय राष्ट्रीय सेना, दिल्ली प्रकाशन, 1986, पृ.165 ।
10. पीटर डब्ल्यू. फे, भूली हुई सेना : 1942-1945 का भारत का सशस्त्र स्वतंत्रता संघर्ष, मिशिगन विश्वविद्यालय प्रकाशन, 1993, पृ.493।